International Journal of Applied Research 2017; 3(10): 359-361

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(10): 359-361
www.allresearchjournal.com
Received: 11-08-2017
Accepted: 19-09-2017

पुष्पा कुमारी
शोध छात्रा, इतिहास विभाग,
ल०ना०मिथिला, विश्वविद्यालय,
दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
पुष्पा कुमारी
शोध छात्रा, इतिहास विभाग,
ल०ना०मिथिला, विश्वविद्यालय,
दरभंगा, बिहार, भारत

मिथिला लोक संस्कृति के विविध आयाम

पुष्पा कुमारी

सारांश
प्रस्तुत आलेख में मिथिला लोक संस्कृति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का विवेचन किया गया है जिसमें मिथिला के इतिहास तथा इसकी संस्कृति, विशेषकर लोक संस्कृति के विविध आयामों जैसे– लोकधर्म, लोक साहित्य, लोककला, मिथिला की प्रदर्शनकारी लोककलाएँ आदि पर अब तक किए गए अध्ययनों को खंगालने की कोशिश की गई है निसंदेह मिथिला लोक संस्कृति की प्राचीनता एवं नैसर्गिकता अप्रतिम है जो आज भी अपनी पहचान तथा वजूद को बाजारवाद के प्रचंड झंझावतों को झेलते हुए भी कायम है।

मुख्य शब्द : मिथिला, लोकसंस्कृति, लोकधर्म, लोकसाहित्य, लोककला, लोकगीत, लोकसंगीत आदि।

प्रस्तावना
हिमालय के पादप्रदेश में कोशि से पश्चिम गाण्डक से पूर्व और गंगा से उत्तर विदेह जनपद एवं राजधानी नगर मिथिला आजकल एक सांस्कृतिक जनपद के रूप में अवशिष्ट है। इस भू–भाग की प्राकृतिक सुषमा ऐतिहासिक गौरव एवं सांस्कृतिक अर्न्तधारा से समृद्ध है। यहाँ के जीवन में लौकिक एवं वैदिक संस्कृति का समाहार लोकवेद में द्रष्टव्य है।
लोक की आपेक्षा संस्कृति परिवर्तनशील होती है। इस प्रकार लोक की अवधारणा एक अटल और अनन्त सागर की है, जिसमें कालक्रम से विभिन्न संस्कृतियों का समावेश हुआ है। फलतः लोक का प्रत्यक्षत्व विलुप्त नहीं होता अपितु वह एक सशक्त प्रतिपक्ष के रूप में स्थापित है।
लोक वस्तुतः अभिजात्य संस्कार एवं पांडित्य चेतना से विलग परम्परित जीवन प्रवाह में जीते–जागते जन समुदाय को कहा जाता है। अतः लोक आर्य चेतना की अपेक्षा लौकिक चेतना से अधिक अनुप्राणित है। संस्कृति की आधारभूमि है, शास्त्र उसका सुसंस्कृत और सुचिन्तित रूप है जो आचार–संहिता के रूप में जीवन मूल्यों को निर्धारित कर लोक को अनुशासित मर्यादित करता है। अतः लोकजीवन में लोक और शास्त्र की युगलबंदी सांस्कृतिक संक्रमण का उदाहरण बनी हुई है।
डॉ0 रामप्रवेश सिंह के अनुसार लोक संस्कृति लोकजीवन की समाष्टिगत चेतना का प्रतिफलन है। आर्यों ने सर्वप्रथम भाषा का संस्कार किया। क्योंकि सांस्कृतिक परिवर्तन का पहला शिकार भाषा ही होती है। वैदिक और लौकिक संस्कृत, जनपदीय प्राकृत, अपभ्रंश और देसिल वयना (मैथिली) इस विकासक्रम का ज्वंलत उदाहरण है। तथापि आदिम भाषायी चेतना की प्रत्यक्षानुभूति जनपदीय भाषा सहित्य एवं कलात्मक आयामों में की जा सकती है। अतः लोकसंस्कृति के विभिन्न आयामों के संरक्षण एवं कलात्मक विकास जनपदीय इतिहास की दृष्टि से विश्वस्तर पर अध्ययन–अनुशीलन के लिए अपरिहार्य विषय क्षेत्र बन गया है।
डॉ0 रामदेव झा ने लोकवृत पर आधारित जनसामान्य की संस्कृति को लोक संस्कृति कहा है। जबकि डॉ0 राम प्रवेश सिंह इसे लोकायत संसकृति कहते है। इसमें सामान्यतः परम्परित लोकविश्वास, मिथकीय अवधारणा, आचार–विचार, चास–बास, भोजन–छाजन, पर्व–त्योहार, राग–भास, नाच–गान लोकवाद्य (लोक–क्रीड़ा) आदि को समेटा जा सकता है। अतः मिथिला के सांस्कृतिक विकास में लोक की कारक तत्व है जिसमें लोक का भूत और वर्त्तमान संचित है और भविष्य सांकेतिक है। इस प्रकार लोक और संस्कृति के बीच तात्विक भेद–प्रभेद को विशेष अध्ययन–अनुशीलन के लिए निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है– 1. लोकधर्म, 2. लोक साहित्य एवं 3. लोककला।

लोक धर्म
प्रकृति का आधार भूमि है। अतः लोकधर्म का प्राकृतिक परिवेश और प्रकृति पूजन भूमि और भूमिपुत्र में केन्द्रित है। वैदिक साहित्य में भूमि को माता तथा मनुष्य को पृथ्वी पुत्र कहा गया है– 'माता–भूमिः पुत्र : अहे पृथिव्याः।' इस प्रकार संस्कृति पृथ्वी और पृथ्वीपुत्र के अंतर्सम्बंध को व्याख्यायित करता है। प्राचीन सभ्यता और संस्कृति के पुरातात्विक उत्खनन से प्राप्त भू–देवी की मृणमूर्तियाँ लोकोपासना के सर्वमान्य प्रमाण है। मिथिलांचल में नदी, नाग, वृक्ष, ज्वालामुखी (आलपा) आदि का

पूजन वस्तुतः अवैदिक कृत्य हैं, जिसका परिष्कृत रूप नदीमातृका गंगा–कमला–कोशी–जीवछ में आरोपित नदी देवीत्व, नागपंचमी, नागभाग, वटसावित्री, ब्रह, (देव अथ्वा चैत्य) वृक्ष आम–महुआ का विवाह, मधुश्रावणी आदि की परिकल्पना, अनानुष्ठानिक कृत्य, व्रतविधान आदि लौकिक आचारों का बनते शास्त्रीय स्वरूप को ही उद्घाटित करता है।

मिथिला का लोकधर्म मूलतः ब्रह्म केन्द्रित है। लोक ब्रह्म आर्थात् सर्वजातीय एवं गाँवों के संरक्षक देवता तथा मातृब्रह्म अर्थात् देव माता, एवं बुढ़िया माई। लोक ब्रह्म (ब्रह्म बाबा) अश्वारोही रूप में और मातृब्रह्म पिण्ड रूप में पूजित है। पिण्ड ब्राह्मण्ड का प्रतीक है। यह इसका प्राचीनतम रूप है। लोक विश्वास के अनुसार मिथिला के समस्त लोकदेवी–देवता इसी ब्रह्मपिण्ड से हुआ है। मातृब्रह्म का पूजन वस्तुतः आर्येत्तर संस्कृति की देन है। लेकिन अश्वारोही ब्रह्म की परिकल्पना है। संभवतः अश्वारोही ब्रह्म वैदिक ब्रह्म का लोकरूप है। कथैया (मोतीपुर, मुजफ्फरपुर) का विशाल ब्रह्मस्थान मिथिला वैशाली के समस्त ब्रह्मों का संसद है, जहाँ मिथिला के अकाल मृत ब्राह्मण ब्रह्म (बरहम) के रूप में पुजाते है। प्रत्येक ब्रह्म का अपना नाम और अपनी कथा लोकप्रचलित है। कुछ लोकदेवताओं अपना मंत्रिमंडल ''चौदह देवान'' के रूप में पिण्ड–पूजित हैं, जिसमें अपदेवी–देवता दोनों परिगणित हैं।

मिथिला के लोकजीवन को उत्कर्ष प्रदान करने के लिए अनेकानेक व्रत एवं पर्व–त्योहारों का विधान विहित हैं, जो जनपदीय जीवन को एक आचार संहिता के रूप में मर्यादित करता है। मधुश्रावणी, वटसावित्री, अक्षयनवमी, नागपंचमी, रवि, षष्ठी, जितिया, भ्रातृद्वितिया आदि की संरक्षिका स्त्रियाँ ही है।

संकट के घड़ी में लोग देवी–देवताओं के शरणागत होते हैं। सेवक, भगत, ओझा–गुणी, धामी–धमिआइन आदि के माध्यम से दैवीकृपा लोक को प्राप्त होती है। इन देवी–देवताओं को मधुर–मिष्ठान, छागर–पाठी, गांजा–भांग, दारू, मिट्टी के हाथी–घोड़े, बाघ, खराँऊ लाठी, सतंजा, विष्ठी आदि अर्पित किये जाते है। भक्तिपरक गीतों में इनका देवी स्वरूप, चमत्कार एवं पूजा–प्रक्रिया में लौकिक आचार और नाच–गान में लोकनुरंजन के भाव प्रमुख होते है।

लोकसाहित्य

लोक के द्वारा एवं लोक के लिए सृजित तथा लोक को अभिव्यंजित करता लोक साहित्य श्रुति और स्मृति परम्परा से संरक्षित होता है। आदिम प्रवृति और परम्पराधारित, अभिजात्य संस्कार से भिन्न जनपदीय भाषा में मुखरित मैथिली लोकसाहित्य मानवीय उद्गार की मौखिक अभिव्यक्ति है। डॉ0 रामदेव झा ने लोकजीवन में प्रचलित परम्परा–प्रवाह में निर्मित श्रुति साहित्य को लोकसाहित्य कहा है जबकि सत्यव्रत सिंहा इसे लोकानुरंजनी साहित्य कहते हैं। विगत दशकों में लोकसाहित्य के अध्ययन अनुशीलन की प्रवृत्ति ने जोर पकड़ ली है, क्योंकि यह विश्व साहित्य का मूलाधार है। डॉ0 जयकांत मिश्र (इन्ट्रोडक्शन टू दी फोक लिटरेचर ऑफ मिथिला, इलाहाबाद, 1950 ई0), डॉ0 तेज नारायण लाल (मैथिली लोकगीतों का अध्ययन, आगरा 1962 ई0), डॉ0 ताराकान्त मिश्र, डॉ0 अणिमा सिंह, डॉ0 प्रफुल्ल कुमार सिंह मौन (मैथिली लोकसाहित्य भूमिका, 1976 ई0), डॉ0 रामदेव झा आदि ने लोकसाहित्य को समग्र रूप से मूल्यांकित करने का प्रयास किया है। इसकी अध्ययन परम्परा का श्री गणेश जार्ज ग्रियर्सन (पीजेन्ट लाइफ, 1885 ई0) ने किया था।

मैथिली लोक साहित्य का फलक व्यापक है– 1. गेयात्मक लोक साहित्य (गाथा गीत एवं लोकगीतों के प्रकार), 2. कथनात्मक लोक साहित्य (लोककथा, लोकोक्ति, बुझौवल आदि), 3. लोकनाट्य साहित्य (लोकधर्मी, नाट्य, गद्य–पद्य मिश्रित), 4. आनुष्ठानिक लोकसाहित्य (आचार, अभिचार विषयक लोकमंत्र आदि)।

लोककला

लोककला मिथिला के सौन्दर्यबोधी लोकचिन्तन का प्रतिफलन है। जनपद के थान–गहबरों में संपूजित लोकदेवी–देवताओं की रंग–बिरंगी मृण्मूर्तियाँ हो आनुष्ठानिक पूजापात्र हो मांगलिक अल्पना अथवा कलात्मक भितिचित्र हो, काठ–बाँस, मूँज, सिक्की एवं कोइढ़ला का कलात्मक सृजन हो अथवा लोकगीत–संगीत और नृत्य–नाट्य से अनुरंजित प्रदर्शनकारी कलाएँ हो, मिथिला की परम्परित लोककलाओं का संसार फैला हुआ है।

मिथिला की लोककलाओं में चित्रकला और मृण्मूर्तिकला सर्व प्राचीन है। कैमूर का गुहाचित्र (कैमूर–डॉ0 प्रकाश चरण प्रसाद, कुमार आनंद, पटना, 2001) और चेचर (वैशाली), बलिगजगढ़ (मधुबनी), करियन (समस्तीपुर) आदि की मृण्मूर्तियाँ इसके प्राचीनतम साक्ष्य हैं। इनमें मातृदेवियों की मृण्मूर्तियाँ सर्वप्राचीन हैं। मिथिला की लोककला के संदर्भ में लोकचित्रकला आज जनपदीय स्तर से ऊपर राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शोधानुशीलन का विषय बन गयी है मिथिला लोक चित्रकला आज इन शैलियों में विकसित है– मधुबनी, जनकपुर और हरिजन चित्रशैली। मधुबनी शैली अभिजात्य (कायस्थ, ब्राह्मण, राजपूत) शैली है। जबकि जनकपुर शैली नेपाल तराई की मधेसी शैली और इन सबों से भिन्न हरिजन शैली मुख्यतः अनभिजात्य (दुसाध, चमार जातीय) शैली की लोकचित्र कला है। लेकिन इनका कलात्मक स्थापत्य लगभग एक समान हैं। मधुबनी लोक चित्रकला शैली श्रोत्रियशैली तंत्राधारित है। दशमहाविद्या, छिन्नमस्ता की काली आदि के चित्र इसके प्रमाण है।

मिथिला लोकचित्रकला को अध्ययनार्थ तीन आयामों में वर्गीकृत किया जा सकता है :– (क) अरिपन (अल्पना), (ख) कोहबर और (ग) प्रसंग चित्र।

मिथिला की प्रदर्शनकारी लोककलाएँ

मिथिला की प्रदर्शनकारी लोककलाओं में परिगणति है– लोकनृय, लोकनाट्य और लोकसंगीत। लोकनृत्य की आदिम उद्भावना गुहाचित्रों में उपलब्ध है। इसी अनुक्रम में भगता, नारदी, कमला, विदापत, रास, पमरिया, बक्खो, डम्फा, बसुँली, झिझिया, झूमर, झमटा, झरनी आदि लोकनृत्यों के परम्परावशेष उपलब्ध हैं। देवी–देवताओं को रिझाने के भगता नृत्य विदापत, कीर्तनियाँ, रास और नारदी वैष्णवधर्मी नृत्य, झूमर, झमटा, फाग, चांचर आदि ऋतु नृत्य, पमरिया और बक्ख का वधैयानृत्य तांत्रिक नृत्य झिझिया डम्फाबसुली, चमर नटुआ धोबिनबटुआ आदि जातीय नृत्य के अतिरिक्त मुसहरों के मृदंग और मलाहों के कमलानृत्य विशिष्ट है। प्रो0 राधाकृष्ण चौधरी (मिथिला इन दी एज ऑफ विद्यापति, वाराणसी, 1976) ने मध्य कालीन परिवेश में बहुत सारे लोकनृत्यों का उल्लेख किया है।

मिथिला में एक तरफ वैष्णवधर्मी लोकनाट्यों की परम्परा है तो दूसरी ओर लोकधर्मी नाट्यों की। वैष्णवधर्मी लोकनाट्यों में विदापत (लोकधर्मी नाट्य परम्परा और विद्यापति, डॉ0 मौन, परिषद पत्रिका पटना, अक्टूबर 1984 ई0) कीर्त्तनियाँ नाटक (कीर्त्तनियाँ नाटक : शिल्प और शैली, डॉ0 मौन, रंग अभियान–8 बेगुसराय), नारदी, रास कृष्णखेला आदि तथा लोकधर्मी नाट्यों में जट–जटिन, सामा–चकेवा, डोमक्छ, सल्हेस, लोरिक, बसावन, नटुआदयाल, गोपीचन, कतका कुमर, हरिलता, सती बिहुला आदि परिगणति है। इनमें जटजटिन सर्वाधिक चर्चित महिलाओं का लोकनाट्य है। इसमें दाम्पत्य जीवन की अनेक जटिलताओं की मार्मिक प्रस्तुति हुई हैं। सामा–चकेबा में भाई–बहिन का निश्छल प्रेम, डोमकछ में विवाह का सामाजिक संदर्भ, सल्हेस लोरिक और वसावन में शौर्य–पराक्रम, श्रृंगार की अन्तर्धारा, नटुआदयाल में व्यापारिक अभियान, गोपीचन में वैराग्य, और सती बिहुला में पति की जीवन रक्षा की गाथा अभिनीत हुई है। इस प्रकार इन लोकप्रिय चरित्रों की गाथाओं की नाट्य रूपांतर से इनकी उपादेयता बढ़ गयी है। इनके अलावा डॉ0 उपेन्द्र ठाकुर ने

मनचुबही नाच, डॉ0 ताराकान्त मिश्र ने विरहानाच, डॉ0 मौन ने रमखेलिया, हरिलता और श्री महेंद्र मलंगिया ने जया विषहरि एवं मैना गोविनाच का उल्लेख किया है। लोकजीवन और लोकानुरंजन से सम्बद्धता के कारण ये लोकनाट्य (नाच) परम्परित हैं।

मैथिली लोकनाट्य का मूलाधार लोकसंगीत है नृत्य और वाद्यसंगीत से संवादों की संरचना शक्ति बढ़ती है। लेकिन संगीत की प्रधानता के कारण इसका कथापक्ष गौण बन जाता है तथापि प्रेक्षकों का सम्मोहन नहीं टूटता। मिथिला लोकसंगीत में लोकजीवन की रागात्मक अभिव्यंजना हुई है। लोकगान वस्तुतः प्रकृतिगान है, जो लयतालयुक्त और आनुष्ठानिक होता है। अभिजात्य स्वयंवरगान की तरह मिथिला में सीता सम्मरि, गौरी सम्मरि, रूक्मिनी, सम्मरि आदि गान की परम्परा हैं लोकदेवी–देवताओं की अराधना के लिए सुमिरन और भगैत आदि गायन की परम्परा है, मैथिली गाथाओं के लिए अलग–अलग वाद्य निर्धारित है। सलहेस और कारीख पंजियार के लिए ओरनी, गोपीचन के लिए सारंगी, घुघली, घटमा के लिए ढ़ोलकी, बसावन–बख्तौर के लिए मृदंग आदि विहित वाद्य है।

निष्कर्ष

वस्तुतः लोक संस्कृति की अवधारणा वैदिक कर्मकाण्ड और आभिजात्य चिंतन के विरूद्ध है। सांस्कृतिक संक्रमण की स्थिति में लोक ने अपना देवाश्रम ग्राम्य गहबरों में स्थापित कर पूजोपासना की अपनी संहिता अपनायी और उसे कलामण्डित किया। फलतः आज मिथिला की लोक संस्कृति अपने भौगोलिक परिवेश, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और जनपदीय चिंतन की परम्परा में लोकधर्म, लोकसाहित्य और लोककला के विभिन्न आयामें में पल्लवित होकर अपनी विशिष्ट पहचान बनायी हुई है। आज विश्वस्तर पर अपसंस्कृति के विरूद्ध हमारी लोक संस्कृति एक सशक्त विकल्प हो सकती है।

संदर्भ

1. दरभंगा डिस्ट्रिक्ट, गजेटियर
2. जयकान्त मिश्र, हिस्ट्री ऑफ मैथिली लिटरेचर, इलाहाबाद, 1949
3. जयकान्त मिश्र : उपर्युक्त
4. जयकान्त मिश्र : इन्ट्रोडक्शन टू दी फोकलिटरेचर ऑफ मिथिला, इलाहाबाद, 1950 ई0
5. तेज नारायण लाल : मैथिली लोकगीतों का अध्ययन, आगरा 1962 ई0
6. प्रफुल्ल कुमार सिंह मौन : मैथिली लोकसाहित्यक भूमिका, 1976 ई0
7. गणेश जार्ज ग्रियर्सन पीजेन्ट लाइफ : 1885 ई0
8. राजेश्वर झा : लोकगाथा विवेचन, 1974 ई0
9. महेन्द्र राम : मैथिली लोकमहागाथा कारिख पंजियार, 2002 ई0
10. प्रफुल्ल कुमार सिंह मौन : राजा सल्हेस : साहित्य और संस्कृति, 2003 ई0
11. शिवमूर्ति सिंह वत्स : मिथिला की लोकगाथाएँ, दिल्ली, 1961 ई0
12. रामलोचन ठाकुर, मैथिली लोककथा, कोलकता, 1390 शाके
13. राम इकबाल सिंह राकेश, मैथिली लोकगीत, इलाहाबाद, 2012 ई0
14. रामप्रवेश सिंह, लोकयत और लोकदेवता, मुजफ्फरपुर, 1986 ई0
15. रामदेव झा, मैथिली लोक साहित्य, स्वरूप ओ सौन्दर्य, दरभंगा, 2002 ई0
16. सत्यव्रत सिन्हा, भोजपुरी लोकगाथा, इलाहाबाद, 1957
17. द्रष्टव्य, प्रफुल्ल कुमार सिंह ''मौन'', मैथिलीक नेनागीत, पटना।
18. द्रष्टव्य, प्रफुल्ल कुमार सिंह ''मौन'', मिथिला की प्रदर्शनकारी कलाएँ, रंगायन उदयपुर, मार्च 1979
19. प्रफुल्ल कुमार सिंह ''मौन'' रंगायन, पूर्वोक्त
20. उपर्युक्त :